भूदान और ग्रामोद्योग

रजि० नं० बी ४४४८
लाअिसेन्स नं० १५

हरिजनसेवक

दो आना

(संस्थापक : महात्मा गांधी)

भाग १९ · सम्पादक : मगनभाई प्रभुदास देसाई अंक १२

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाअी देसाअी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद–१४

अहमदाबाद, शनिवार, ता० २१ मअी, १९५५

वार्षिक मूल्य देशमें रु० ६
विदेशमें रु० ८; शि० १४

गांधीजीके अनुसार औद्योगिक नीति

नागपुरमें (सन् १९३८ में) हुअी अिस आर्थिक परिषद्के कोअी तीस सदस्य मगन संग्रहालयकी अुद्घाटन-विधिके अवसर पर अुपस्थित थे। गांधीजीने बातचीतका प्रारंभ करते हुअे कहा, "मैं चाहता हूं कि आप लोग आपने यहां जो देखा है अुसकी आलोचना करें, और जो दोष आपको नजर आये हों, अुन्हें मुझे बतायें। मैं नहीं चाहता कि आप प्रशंसा करें। अुससे मुझे कोअी मदद नहीं मिलेगी। मुझे मालूम है कि कहां मेरी प्रशंसा की जा सकती है। लेकिन, जैसा कुछ अर्थशास्त्री पहले कर चुके हैं, अुस तरह अेकदम अधिकारके स्वरमें अैसा निर्णय भी न दें कि—यह सब नहीं चलेगा। अिस तरहकी निन्दाका मेरे अूपर कोअी प्रभाव नहीं होगा। लेकिन यदि बारीकीसे और सहानुभूतिपूर्वक अध्ययन करनेके बाद आपको कमियां दिखें और आप अुन्हें मुझे बतायें तो मैं आपका आभार मानूंगा।"

अुन्होंने पूछा, "क्या आप बड़े पैमाने पर अुत्पादनके खिलाफ हैं?"

गांधीजीने कहा, "मैंने अैसा कभी नहीं कहा। यह खयाल मेरे बारेमें जो अनेक भ्रान्त धारणाअें प्रचलित हो गयी हैं, अुनमें से अेक है। मेरा आधा समय अिसी तरहके प्रश्नोंका अुत्तर देनेमें चला जाता है। लेकिन वैज्ञानिकोंसे मैं ज्यादा अच्छी जानकारीकी अपेक्षा रखता हूं। आपका प्रश्न समाचार-पत्रोंमें छपनेवाली अधकचरी रिपोर्टों या अिसी तरहकी चीजों पर आधारित है। मैं जिस चीजके खिलाफ हूं, वह है अुन वस्तुओंका बड़े पैमाने पर बनाया जाना जिन्हें कि ग्रामीण लोग आसानीसे खुद बना सकते हैं।"

दूसरा प्रश्न था, "कांग्रेस योजना समितिके बारेमें आपका क्या खयाल है?"

गांधीजीने अुत्तर दिया, "मैं अुसके बारेमें कुछ नहीं कह सकता। कार्य-समितिमें अुस पर मेरी अुपस्थितिमें विचार नहीं किया गया। चूंकि मैं कार्य-समितिको अपनी सलाह, जब वह चाहती है, अभी भी देता रहता हूं, अिसलिअे आप यह न समझें कि कार्य-समितिसे जो भी चीज बाहर आती है, अुसे मेरी स्वीकृति प्राप्त है या यह कि अुस पर मेरे साथ चर्चा हो चुकी है। जहां तक कांग्रेसके सामान्य निर्णयोंका सवाल है, मैंने अपनेको अुस जिम्मेदारीसे जानबूझकर मुक्त कर लिया है।"

फिर अुन्होंने पूछा, "क्या आप समझते हैं कि गृह-अुद्योगों और बड़े अुद्योगोंमें मेल साधा जा सकता है?"

गांधीजीने कहा, "हां, अगर अुनका नियोजन गांवोंकी सहायता करनेकी दृष्टिसे किया जाय तो साधा जा सकता है। चाबी-रूप मुख्य अुद्योगोंका, अुन अुद्योगोंका जिनकी राष्ट्रको आवश्यकता है, केन्द्रीकरण किया जा सकता है। लेकिन तब मैं अैसे किसी भी अुद्योगको चाबी-रूप मुख्य अुद्योग नहीं मानूंगा, जिसे थोड़ा-बहुत संघटन करके गांव खुद चला सकते हैं। अुदाहरणके लिअे, मुझे हाथ-कागजकी संभावनाअें मालूम नहीं थीं। लेकिन अब अुसकी सफलता देखकर मैं अुसके बारेमें काफी आशान्वित हो गया हूं। अब तो मेरा यह विश्वास हो गया है कि हर-अेक गांव अपनी आवश्यकताका कागज खुद पैदा कर सकता है। हां, अखबारों आदिके लिअे लगनेवाला कागज वे पैदा नहीं कर सकते। अब मान लीजिये कि कागजका अुद्योग सरकार अपने हाथमें लेती है और अुसका केन्द्रीकरण करती है, तो मैं अुससे यह अपेक्षा रखूंगा कि जिस कागजको गांव बना सकते हैं अुसे वह संरक्षण देगी।"

"गांवोंको संरक्षण देनेसे आपका क्या अभिप्राय है?" अुन लोगोंने पूछा।

गांधीजीने अुत्तर दिया, "अुन्हें शहरोंके आक्रमणसे बचाना। मेरी योजनामें शहरोंको अैसी किसी चीजका निर्माण नहीं करने दिया जायगा, जिसका अुत्पादन अुतनी ही अच्छी तरह गांव भी कर सकते हैं। शहरोंका सही अुपयोग यह है कि वे गांवोंकी बनी हुअी चीजोंकी खरीद-बिक्रीके लिअे मंडीका काम करें।"

"क्या कपड़ा-मिलके अुद्योगका हाथ-करघा अुद्योगके साथ मेल बिठाया जा सकता है?"

अुन्होंने कहा, "जहां तक मैं जानता हूं, अिस प्रश्नका मेरा अुत्तर प्रबल नकार है। हमें जितना कपड़ा चाहिये, वह सब गांवोंमें आसानीसे पैदा किया जा सकता है।"

अर्थशास्त्रियोंने कहा, "लेकिन मिलोंकी संख्या तो बढ़ती जा रही है।"

"वह अेक दुर्भाग्य है," गांधीजीने कहा।

अर्थशास्त्रियोंने कहा, "लेकिन योजना-समितिने जो काम अपने अपने हाथमें लिये हैं, अुनमें से अेक यह भी है।" गांधीजीने कहा, "यह मैं पहली बार सुन रहा हूं। अैसी हालतमें कांग्रेसको अपना खादी-सम्बन्धी प्रस्ताव रद कर देना पड़ेगा।"

अिसी विषय पर गांधीजी और अेक पोलिश अिन्जीनियर अेम० फ्रिडमेनके बीच भी चर्चा हुअी। श्री फ्रिडमेनने कहा, "आपका अन्तिम अुद्देश्य स्वावलंबी गांवोंका निर्माण करना है। लेकिन यह तभी हो सकता है, जब सब लोग शब्दके भारतीय अर्थमें सुसंस्कृत हों। क्या अुद्योगीकरण भूमिको समान करनेका—सबको अेक ही स्तर पर लानेका—काम नहीं कर रहा है? क्या अुसका विरोध करना महज परिश्रमका अपव्यय नहीं है? अिसके बजाय क्या यह ज्यादा अच्छा नहीं होगा कि हम अुसकी दिशा बदलनेकी कोशिश करें?"

गांधीजीने कहा, "आप अिन्जीनियर हैं, अिसलिअे अपनी बात समझानेके लिअे मैं आपको गतिके गणितका अुदाहरण दूंगा।

www.vinoba.in

शक्तियां अलग-अलग अपनी-अपनी रेखा पर काम करती रहती हैं। वे अेक-दूसरेका काम बन्द नहीं करतीं। अुनके अिस तरह अलग-अलग अपना काम करते रहनेसे जो परिणाम आता है, वही गतिकी अन्तिम दशा प्रगट करता है। आपने जो सवाल खड़ा किया है, अुसमें भी अैसा ही होगा। मैं रूसकी ओर देखता हूं, जहां कि अुद्योगीकरणकी पूजा की गअी है, तो वहांकी जीवन-दशासे मुझे सन्तोष नहीं होता। बाअिबिलकी भाषामें कहूं तो 'आदमी सारी दुनिया जीत ले, लेकिन अपनी आत्मा खो दे, तो अुसे क्या लाभ हुआ?' यानी, आजकी भाषामें कहें तो अपना व्यक्तित्व खोकर मशीनका पुर्जा बन जाना मनुष्यके गौरवकी हानि करना है। मैं चाहता हूं कि हरअेक व्यक्ति समाजका अेक पूरा अुत्साही और विकसित सदस्य बने। देहातोंको स्वावलंबी होना ही चाहिये। अगर हमें अपना काम अहिंसाके अनुसार करना हो, तो मुझे अिसके सिवा कोअी दूसरा हल नजर नहीं आता। मुझे अब अिसका पूरा निश्चय हो गया है। मैं जानता हूं कि दूसरे लोग भी हैं जिनका विश्वास अुद्योगीकरणमें है। मैं अपनी पूरी ताकतसे अपने विश्वासके लिअे काम कर रहा हूं। अनुकूलनकी प्रक्रिया चल रही है। मैं नहीं जानता नतीजा क्या होगा। लेकिन जो भी हो, अुससे हमारा लाभ ही होगा।"

श्री फ्रिडमेनने पूछा, "क्या स्वावलंबी गांवोंके आदर्शको खतरेमें डाले बिना अुद्योगीकरणके साथ कोअी समझौता नहीं हो सकता?"

गांधीजीने अुत्तर दिया, "जरूर हो सकता है। रेलोंकी बात लें। मैं अुनसे कहां बचता हूं? मोटरोंको बहुत नापसंद करता हूं, तब भी अनिच्छापूर्वक मैं अुनका अुपयोग करता ही हूं। मुझे फाअुन्टेन-पेन अच्छे नहीं लगते, लेकिन आप देखते हैं कि मैं अुसका अुपयोग कर रहा हूं, यद्यपि अपनी पेटीमें मैं कलम भी रखता हूं। समझौता तो हर कदमके साथ आता रहता है। लेकिन हमें याद रखना चाहिये कि वह समझौता है और अपनी दृष्टिसे अन्तिम ध्येयको ओझल नहीं होने देना चाहिये।"

"जब मैं अपनी नजर निरन्तर कार्यव्यस्त पश्चिमसे हटाकर भारतमें बसनेवाली जनता पर डालता हूं", श्री फ्रिडमेनने कहा, "तो मुझे लगता है कि मानो मैं अेक दूसरी ही दुनियामें आ पहुंचा हूं, जिसमें गतिका कहीं कोअी चिह्न नहीं है।"

गांधीजीने कहा, "हां, जब तक आपकी दृष्टि सतह पर तैरती रहेगी, तब तक आपको अैसा ही मालूम होगा। लेकिन ज्यों ही आप अुनसे बोलना शुरू करेंगे और वे आपसे बोलेंगे, त्यों ही आपको विदित होगा कि अुनके होंठोंसे ज्ञान झर रहा है। असुन्दर बाहरके पीछे आपको आध्यात्मिकताका गहरा जलाशय नजर आयेगा। मैं अिसे ही संस्कृति कहता हूं। यह चीज आपको पश्चिममें नहीं मिलेगी। आप युरोपके किसी किसानसे बात करें और आपको पता चल जायगा कि आध्यात्मिक बातोंमें अुसे कोअी रस नहीं है। लेकिन भारतीय ग्रामीणमें दहकानियतके बाहरी आवरणके पीछे अेक बहु-प्राचीन संस्कृति छिपी हुअी है। अिस आवरणको हटायें, अुसकी निरक्षरताका निवारण करें और आपको संस्कृत, शिष्ट और स्वतंत्र नागरिकका अेक सुन्दरतम नमूना नजर आयेगा।"

[श्री तेन्दुलकरकी पुस्तक 'महात्मा', खण्ड–५, पृ० ९-११ से]
(अंग्रेजीसे)

महात्मा (अंग्रेजीमें)
लेखक : डी० जी० तेन्दुलकर
आठ भागोंका पूरा सेट
कीमत २२०–०–० डाकखर्च १६–०–०
प्राप्तिस्थान :— नवजीवन कार्यालय, अहमदाबाद – १४

औद्योगीकरणका मूल्य

भारत-सरकार और बड़े बड़े अुद्योगपति भारतमें युरोपीय औद्योगिक क्रान्तिके आधार पर औद्योगिक क्रान्ति जैसी कोअी चीज शुरू करनेकी आकांक्षा रखते हैं। अिस संबंधमें 'हरिजन' के अेक पाठकने 'मान्चेस्टर गार्डियन' साप्ताहिक (ता० ९-९-'५४) का निम्नलिखित संपादकीय लेख मेरे पास भेजा है। जैसा कि पाठक देखेंगे, वह हमारी सरकारको भी अिस विषयमें सलाह देनेवाला है। अनजानमें वह हमारी बजट-नीतिकी मुख्य दिशाओं पर प्रकाश डालता है, साथ ही वह हमारे अर्थमंत्री द्वारा घाटेके बजटकी अपनाअी-हुअी तरकीबके अर्थको भी प्रकट करता है। सम्पादकीयमें कहा गया है:

"'मान्चेस्टर स्कूल ऑफ अिकोनॉमिक्स अेण्ड सोशियल स्टडीज़'के चालू अंकमें प्रो० डब्ल्यू० लुअिस अेक प्रश्न पूछते हैं, जिसकी विद्वत्तापूर्ण पत्रोंमें काफी चर्चा हो रही है, और पाश्चात्य सभ्यताके राजनीतिक भविष्य पर टीका करते हैं। वह प्रश्न है: पिछड़े हुअे देशोंमें आर्थिक विकासकी प्रगतिशील प्रक्रिया शुरू करने, अुन्हें अपने 'जैसे-थे' की स्थितिवाले, निम्न स्तरवाले, संतुलनसे मुक्त करने तथा औद्योगिक क्रान्ति जैसी कोअी चीज वहां शुरू करनेकी सच्ची कुंजी क्या है?

'(वे कहते हैं कि) आर्थिक विकासमें केन्द्रीय समस्या अुस प्रक्रियाको समझनेकी है, जिसके द्वारा कोअी समाज, जो पहले अपनी राष्ट्रीय आयका ४–५ प्रतिशत या अिससे कम बचाता था और अुद्योगोंमें लगाता था, अपनी अर्थ-रचनाको अैसा रूप दे देता है, जिसमें राष्ट्रीय आयका करीब १२ से १५ प्रतिशत या अिससे ज्यादा भाग स्वेच्छासे बचाया जाता है।'

"अिसमें रुकावट मजदूरोंकी नहीं है। अकुशल मजदूर तो बहुतायतसे मिलते हैं, जो देशकी अर्थ-रचनाके जीवन-निर्वाह जितनी आय भी मुश्किलसे कमानेवाले क्षेत्रकी 'छिपी बेकारी' में छिपे होते हैं। न अन्तिम विश्लेषणमें रुकावट कुशल मजदूरोंके अभावके कारण है:

'कुशल मजदूरोंका अभाव अिस अर्थमें अस्थायी रुकावट है कि अगर आर्थिक विकासके लिअे पूंजी अुपलब्ध हो तो पूंजीपति या अुनकी सरकार तुरन्त ही तालीम देकर कुशल मजदूर तैयार करनेकी व्यवस्था कर लेती है। **अुद्योगोंके विस्तारमें सच्ची रुकावटें हैं पूंजी और कुदरती साधन-सम्पत्तिका अभाव।**' (मोटा टाअिप मैंने किया है)

"आम तौर पर अिन देशोंमें कुछ औद्योगिक विकास हो चुका है; वहां जीवन-निर्वाह जितनी मजदूरी भी मुश्किलसे कमानेवाले मजदूरोंके समुद्रसे घिरे हुअे अनेक छोटे औद्योगिक टापू दिखाअी देते हैं। लेकिन अधिक विकास पूंजीके अभावके कारण रुक गया है।

"प्रो० लुअिसके लेख (जो कुछ अंश तक पुराने आर्थिक विश्लेषणका जामा पहने हुअे है) की मौलिकता अधिकतर अुनके समाजशास्त्र-संबंधी निरीक्षणमें निहित मालूम होती है।

"जैसा कि हम सब जानते है, जीवन-निर्वाह जितनी मजदूरी भी मुश्किलसे कमानेवाले मजदूर अितने गरीब होते हैं कि वे कुछ बचा नहीं पाते, लेकिन प्रो० लुअिसका कहना है कि धनी लोग भी गलत रूपमें धनी हैं: ४० प्रतिशत आय आबादीके सबसे धनी १० प्रतिशत लोगोंके हाथोंमें जाती है, फिर भी बचत थोड़ी होती है और अुद्योगोंमें अुससे भी कम

www.vinoba.in

पूंजी लगाअी जाती है, क्योंकि ये धनी लोग अधिकतर जमींदार या व्यापारी वर्गके होते हैं जिन्हें औद्योगिक साहसकी बिलकुल रुचि नहीं होती। जिन लोगोंसे बढ़ी हुअी आयका अुत्पादक अुपयोग करनेकी आशा रखी जा सकती है, वे केवल देशके मौजूदा अुद्योगपति या बाहरसे लाये गये नये अुद्योगपति हैं। **अुनके मुनाफेको बढ़ने देना चाहिये,** ताकि वे अुसे नअी फैक्टरियोंमें लगायें, जो अधिक पूंजी लगानेके लिअे अधिक मुनाफा कर सकें। अिस तरह अिस प्रक्रियाको आगे बढ़ने देना चाहिये। कुछ मामलोंमें थोड़े मुद्राप्रसारके जरिये अुद्योगोंमें पूंजी लगानेकी प्रक्रियाको मदद पहुंचाना सलामत होगा, बशर्ते कि मुद्राप्रसार पर नियंत्रण रखा जा सके और अुसके कारण बढ़ी हुअी आय किसानों, व्यापारियों और जमींदारोंके हाथोंमें (जो केवल मौज-शौकमें या जमीन अथवा कम मात्रामें मिलनेवाली चीजोंके भाव बढ़ानेमें ही वह पैसा खर्च करेंगे) न जाने दी जा सके।

"सच्चे अर्थमें औद्योगिक क्रान्ति चाहनेवाली सरकारके लिअे प्रो० लुअिसकी नीति अैसे अुपायोंके रूपमें मालूम होती है, जिनसे **आयका बंटवारा औद्योगिक मुनाफा बढ़ानेके पक्षमें हो, बाकीके समाज — विशेषतः जमींदारों और व्यापारियों — की आय बढ़ानेके पक्षमें न हो।** मजदूरोंके मामलेमें सच्ची मजदूरी घटाअी न जाय, परंतु अुसे तब तक बहुत मामूली हदसे अधिक बढ़नेसे रोका जाय, जब तक बढ़ते रहनेवाले विकासकी प्रक्रिया अैसी जड़ जमा ले कि कोअी अुसे रोक न सके। साथ ही, बेशक, देशमें नये अुद्योगपतियोंको अूंचे, अधिकतर कर-रहित मुनाफेकी आशा दिलाकर प्रोत्साहन दिया जाय और देशमें आय पर जो भी कर लगाये गये हों, अुन्हें पुनः पूंजी लगानेके पक्षमें भेदभाव करना चाहिये।

"प्रो० लुअिसकी दलीलें नये **कोलोनियल सेक्रेटरी** और दूसरों — अुदाहरणके लिअे, **भारत-सरकार**के लिअे विचारणीय मालूम होती हैं।"

तो प्रो० लुअिस द्वारा सुझाया हुआ मार्ग पुराण पंथी अर्थशास्त्रीका पाश्चात्य ढंगके औद्योगीकरणकी दिशामें ले जानेवाला मार्ग है। क्या अुसे अपनानेकी कीमत चुकानेके लिअे हम तैयार हैं? प्रोफेसरने संक्षेपमें अुसके सारे पहलू बता दिये हैं।

वे कहते हैं कि दूसरोंको नुकसान पहुंचाकर अुद्योगपतिको ज्यादा मुनाफा करने देना चाहिये; अिन सब लोगोंको अुसके अुद्योगके विकासके लिअे श्रम करना चाहिये, ताकि वह और ज्यादा मुनाफा कमा सके। किसानों और जमींदारोंकी आयको बढ़ने नहीं देना चाहिये। खेती वगैराके नहीं बल्कि अुद्योगोंके हितमें नियंत्रित मुद्राप्रसार भी किया जा सकता है। मजदूरोंकी मजदूरी ज्यादा नहीं बढ़ने देना चाहिये; वगैरा वगैरा। थोड़ेमें, अुद्योगपतिके सिवा **किसीको** मुनाफा न कमाने दिया जाय और न मुनाफा कमानेमें अुनकी मदद की जाय; अुद्योगपतिके साथ अिसलिअे अैसा व्यवहार किया जाय कि अुद्योगवाद फले-फूले!

हमारे देशका विचार करते हुअे हम स्पष्ट देख सकते हैं कि अिसका हमारी समाजवादी ढंगकी समाज-रचनासे निश्चय ही कोअी संबंध नहीं है; यह तो पूर्ण विकसित पूंजीवादी व्यवस्था होगी या खानगी क्षेत्रके लिअे स्वतंत्र साहसको प्रोत्साहन देनेवाली बात होगी।

प्रो० लुअिस अैसी नीतिके रास्तेमें आ सकनेवाली रुकावटोंकी चर्चा करते हैं। लेकिन वे बाजार मिलनेकी शक्यता और पिछड़े देशोंमें खरीद-शक्तिके स्थायी अभावका विचार करना भूल जाते हैं। हमारे जैसे मुख्यतः खेतीप्रधान देशमें प्रो० लुअिसके विचार बड़े अजीब मालूम होते हैं। वे अैसे देशमें और अैसे देशके लिअे पैदा हुअे हैं, जिसके पास अुपनिवेश हैं। अिसलिअे अुनके साथ दुःखदायी शर्तें लगी हुअी हैं और वे काफी पुराने हो चुके हैं। यहां कोलोनियल सेक्रेटरीको दी गअी सलाह बहुत महत्त्वपूर्ण है। भारतके लिअे वह बिलकुल गलत है, जो अुपनिवेश नहीं रखना चाहता, बल्कि गांवोंमें बसे हुअे अेक शांतिपूर्ण देशके नाते जीना चाहता है। ये गांव तभी तरक्की कर सकते हैं, जब हम अपने देशमें अेक बिलकुल नये ढंगका औद्योगीकरण करें। अुसकी कल्पना गांधीजीने की है, अर्थात् वह मजदूर-प्रधान होना चाहिये पूंजी-प्रधान नहीं, जैसा कि प्रो० लुअिस भारतकी अनोखी स्थितिका खयाल किये बिना और विश्वके कारोबारमें हमारी नअी लोकशाही जो हिस्सा लेना चाहती है, अुसका विचार किये बिना बताते हैं। औद्योगिक अर्थ-रचना कितनी पुराणपंथी और कट्टरतावादी है!

२७–४–'५५ **मगनभाई देसाई**

(अंग्रेजीसे)

वनस्पति घीको जमाया न जाय

भारत-सरकारने १२ मार्चको वनस्पति घीमें रंग मिलानेके संबंधमें अेक सभा बुलाअी, जिसकी अध्यक्षता स्वयं अन्नमंत्रीजीने की। पिछले ६ वर्षोंमें किये गये रंग-संबंधी प्रयोगोंकी चर्चा हुअी। अिसमें ग्यारह विशेषज्ञोंने अपना अपना मत प्रकट किया। लगभग सात प्रकारके रंग सुझाये गये। परन्तु अिनमें से कोअी भी निम्न छह शर्तोंको पूरा नहीं कर सका। अतः गत ६ वर्षोंमें अिस कार्यमें कोअी प्रगति नहीं हुअी अैसा दिखाअी पड़ा।

(१) वनस्पति घीकी क्वालिटी खराब न हो।
(२) स्वास्थ्यके लिअे हानिकर न हो।
(३) मिलावट रोकनेमें कारगर हो और आसानीसे मिलाया जा सके।
(४) आसानीसे अुड़ाया न जा सके।
(५) देखने, स्वाद व गन्धमें अरुचिकर न हो।
(६) काफी तादादमें और ठीक दामोंमें मिल सके।

अ० भा० सर्व-सेवा-संघके श्री राधाकृष्ण बजाज भी अिस संभामें विशेष निमंत्रण पर अुपस्थित थे। अुन्होंने कहा कि सरकारको यह नियम बनाना चाहिये कि वनस्पतिको जमानेके स्थान पर तरल (liquid) रूपमें टिनोंमें भरकर मिलोंसे निकाला जावे। अिससे मिलावटका प्रश्न हल हो जावेगा। डॉ० सतीशचन्द्र दासगुप्तने कहा कि यदि वनस्पति तेल पर थोड़ा हाअिड्रोजनेशन करके अुसे पतला रखा जाये, तो मिलावट नहीं हो सकेगी और रंगका प्रश्न ही नहीं अुठेगा। श्री श्रीमन्नारायण अग्रवालने अिस सुझाव पर गंभीरतासे विचार करनेकी सलाह दी। मिल-प्रतिनिधियोंने अिस सुझावका विरोध किया। श्री अजितप्रसाद जैन, अन्नमंत्रीने अन्तमें मिलावटको रोकनेके लिअे वनस्पति तेल पतला रखनेके सुझाव पर विशेष विचार करनेका समर्थन किया।

('अ० भा० सर्व-सेवा-संघ वार्ता' से)

ठक्करबापा

[जीवन-चरित्र]

लेखक : **कान्तिलाल शाह**; अनु० **राममारायण चौधरी**

कीमत ५–०–० डाकखर्च १–२–०

ग्रामसेवाके दस कार्यक्रम

[तीसरी बार]

लेखक : **जुगतराम दवे**; अनु० **रामनारायण चौधरी**

कीमत १–४–० डाकखर्च ०–५–०

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद–१४

www.vinoba.in

हरिजनसेवक

२१ मअी १९५५

भूदान और ग्रामोद्योग

भाअी मूलचंद अग्रवाल मंदसौर (मध्यभारत) से नीचेका प्रश्न अुठाते हैं। पाठक देखेंगे कि यह प्रश्न स्वाभाविक और सही है। मेरे खयालसे यह बड़ा मौलिक भी है। पुरी सम्मेलनमें अिसकी काफी चर्चा होती तो अच्छा होता। अग्रवालजीका प्रश्न यह है:

> 'हरिजनसेवक' में 'भूदान-प्रवृत्तिका लेखाज़ोखा' नामक आपका लेख पढ़ा। अुसमें लिखा है कि भूदान-आन्दोलनमें खादी-ग्रामोद्योग अुसके अभिन्न अंगके रूपमें अुसमें जोड़े गये। अेक तरफ तो विनोबा कहते हैं कि वे भूदान-मूलक ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक समाजकी रचना करना चाहते हैं और दूसरी तरफ पुरी सम्मेलनमें यह प्रस्ताव पास हुआ है कि 'सभी कार्यकर्तागण कमसे कम दो वर्षोंके लिअे अन्य सभी काम छोड़कर भूदान-यज्ञमें अपनी सारी बुद्धि-शक्ति और कार्यकुशलता समर्पण करें।'
>
> "अिस प्रस्तावके पश्चात् लोगोंमें कुछ गलतफहमी होने लगी है। कुछ लोगोंका कहना तो यह है कि ग्रामोद्योगोंका कार्य भूदान-यज्ञ आन्दोलनका ही अंग होनेसे ग्रामोद्योगोंका कार्य करना भूदानके कामको ही मदद करना है। दूसरोंका कहना है कि ग्रामोद्योगी कार्यकर्ताओंको वह काम छोड़कर केवल भूदानके ही काममें लग जाना चाहिये।"

पुरी सम्मेलनका प्रस्ताव साफ है। अुसके अनुसार श्री अण्णासाहब सहस्रबुद्धे, श्री लक्ष्मीबाबू और श्री सिद्धराजजी ढड्ढाने खादी-ग्रामोद्योग-बोर्डसे अिस्तीफा दिया। दूसरे लोग भी अिस ढंगसे शायद अपने अपने क्षेत्रमें सोचते होंगे।

अिसी विचारसे प्रेरित होकर सेवाग्राम आश्रमवासी वहांकी स्मारक कुटीर वगैरा गांधी स्मारकको सौंपकर भूदान कार्यमें चले गये, अैसा अखबारोंसे पता चलता है।

परन्तु अिन दोनोंमें बड़ा फर्क है। चालू ग्रामोद्योग, नयी तालीम आदि हमारे कामोंसे मुक्त होना और भूदानमें भरती होना अेक बात है; अपने चालू कामोंसे, बिना अुनको क्षति पहुंचाये, निकलकर भरती होना दूसरी बात है। सेवाग्राम आश्रमवासियोंका जाना दूसरे ढंगका है। श्री अग्रवालका प्रश्न पहली बातसे सम्बन्ध रखता है।

अिसी तरह हमारे कअी रचनात्मक कार्यकर्ताओंके मनमें भी यह प्रश्न अुठा होगा। गुजरातके अेक अग्रगण्य सेवकसे मैंने अिसके बारेमें पूछा तो अुन्होंने कहा, 'अपने क्षेत्रमें जो व्यवसायात्मिका बुद्धिसे काम करते होंगे अुनको यह प्रश्न क्यों अुठना चाहिये? खादी, ग्रामोद्योग, नयी तालीम आदि हमारे मौलिक क्रान्तिकार्यके पहलू हैं। अुनको छोड़नेका प्रश्न मेरे दिलमें तो बैठ नहीं सकता।'

मैं अुनके अुत्तरको सही मानता हूं। मैं अपने लिअे भी सोचता हूं कि क्या मुझे नयी तालीमका गुजरात विद्यापीठका काम और 'हरिजन' पत्रोंका काम छोड़कर भूदान-परिव्रज्यामें भरती होना चाहिये? मैं नहीं मानता कि छोड़ना चाहिये।

मैं मानता हूं कि यह प्रश्न स्वातंत्र्य आन्दोलनमें भरती होनेके ढंगका नहीं है। खादी, राष्ट्रीय शिक्षा, ग्रामोद्योग, हरिजन-सेवा, वगैरा हमारे राष्ट्रके नवनिर्माणके काम हैं। भूदान अिनमें अब अेक नया जुड़ता है। हरअेकके जरिये हम अहिंसक समाज कायम करनेकी चेष्टा कर रहे हैं, अैसी समग्र सेवाकी दृष्टि रख कर हमें चलना चाहिये। अिसलिअे १९४८ में गांधीजीने जैसे कांग्रेसको लोक सेवक संघ बननेको कहा, वैसे रचनात्मक कार्योंकी अलग अलग संस्थाओंका अेक नवसंगठन करनेका भी सोचा था, जो वे नहीं कर पाये और चल बसे। सर्व-सेवा-संघ अुसी खयालसे पैदा हुआ। जैसे कांग्रेस अपना वह परिवर्तन नहीं कर सकी, वैसे हम भी नहीं कर सके। सारे सेवक अपने-अपने सेवाकार्यमें मस्त रहे और दूसरे रचनाकार्योंको न समझे, न अुनके साथ अपने कार्यका आंतर-संबंध देख सके। परन्तु अैसा किये बिना हमारा ध्येय पूरा नहीं हो सकेगा, क्योंकि हमारे सारे कार्य अेक ही सूक्ष्मभावके स्वरूप हैं। अिसी कारण समग्र सेवाका विचार अुठा और समग्रतामें अपने कामकी अेकाग्रता देखें और अिसी अेकाग्रतासे समग्रताकी आराधना करें, यह हमारी सेवा-पद्धतिका सूत्र बना। अिसके अनुशीलनके लिअे हमने सर्व-सेवा-संघ कायम किया, अैसा मैं मानता हूं। परन्तु अिस विषयकी मैं ज्यादा चर्चा नही करूंगा। मेरा मतलब यह है कि हम व्यवसायात्मिका बुद्धिसे सोच लें, और अिस प्रश्नका अुत्तर अपने लिअे पा लें।

अिस प्रश्नके सम्बन्धमें अैसा भी कहा जाता है — जैसा कि भाअी जयप्रकाशनारायणने पुरीमें कहा — कि खादीसे, नयी तालीमसे क्रान्ति न हुअी; अिसलिअे अुनको छोड़कर भूदानके जरिये काम लेनेमें लग जाना चाहिये। मैं नहीं जानता जयप्रकाशजीने क्रांतिका क्या अर्थ समझकर यह विधान किया है। सत्याग्रह या अहिंसा कभी असफल नहीं होते, हम असफल होते हैं। अुसके मानी यही हैं कि खादी, ग्रामोद्योग, नयी तालीम वगैरा असफल सिद्ध नहीं हुअे, बल्कि हमने अुनको अब तक आजमाया नहीं। ये चीजें परस्पर अैसी जुड़ी हुअी हैं कि किसी अेकको भी सफल करो तो सारी सफल होंगी। भूदान भी अुनके बिना असफल है; सिर्फ जमीनका चंदा अिकट्ठा करना बन जाता है। अिन चीजोंके बिना जमीनका बंटवारा हमारा मसला हल नहीं कर पायेगा। जमीनकी मालकियत भगवान्‌की है, अुसका यह अर्थ कभी नहीं हो सकता कि अुसके अुपयोगकी दृष्टिसे अुसकी कोअी व्यवस्था या अिन्तजाम नहीं करना पड़ेगा। ट्रस्टीधर्म यह बताता है कि मालकियत कोअी चीज नहीं है; जो अिस तरहसे मानी जाती है वह ट्रस्टीपन ही है। अिसीसे राज्य-संस्था जमीनका अिन्तजाम करनेका हक अपना मान सकती है; और व्यक्ति अपने पास जो हो अुसमें से दान करना अपना धर्म समझेगा।

अिससे खादी, ग्रामोद्योग वगैरा हमारे कामोंके बारेमें अुपेक्षा-बुद्धि रखनेको मैं न समग्र सेवाकी दृष्टिसे, न हमारे वर्तमान कार्यकी दृष्टिसे ठीक मानता हूं। हमारे भूदान-कार्यका अिसके साथ हमने, जैसा गया परिषद्‌में बताया गया था, अविभाज्य सम्बन्ध माना है। भूदान-कार्य हमने नया शुरू किया है, जो सरकार भी अपने ढंगसे कर रही है। हमारा कार्य अुससे भी आगे जाकर लोगोंमें परिवर्तन करने तक पहुंचता है, यह अुसकी विशेषता है। अुसकी सफलता बेजमीनको जोतनेके लिअे जमीन देकर और अुसके साथ खादी वगैरा कार्य सिखाकर स्वावलंबी बनानेमें है। ग्रामोद्योगोंके बिना यह असंभव है। अितना ही नहीं, ग्रामोद्योगोंके बिना बेकारी भी नहीं हटेगी, और न हमारे लोगोंको कोअी अुचित जीवन-मान हासिल होगा। गोसेवा, हरिजन-सेवा, खादी-ग्रामोद्योग-सेवा, नयी तालीम, भूदान-कार्य, ये सब अेक ही क्रान्तिको प्रेरित करनेवाले अंग हैं। अुपनिषद्‌की भाषामें कहूं तो जैसे चतुष्पाद आत्मा तीन व्यक्त पादोंसे तुरीय अव्यक्त रूपमें

www.vinoba.in

समझा जाता है, वैसे ही अहिंसक समाजकी क्रान्ति अुसके अिन पादोंसे समझी जाती है। परन्तु वह है अुनके बादकी अव्यक्त दशा। यह क्रान्ति गांधीजीने कभीकी आरंभ कर दी है; हमें चाहिये कि हम अुस कामको पूरा करें और सावधान रहकर व्यवसायात्मिक बनें।

५–५–'५५ मगनभाई देसाई

भूदानके बारेमें कुछ सवाल

[संखचिला, अुत्कल, में ता० १९–२–'५५ को दिये गये प्रवचनसे।]

आज अेक भाअीने कुछ सवाल पूछे हैं: पहला तो सवाल ही नहीं है, बल्कि सुझाव है कि दान शब्दका अिस्तेमाल क्यों किया जाता है? भूमि-दानके बजाय भूमि-बंटन या अैसा ही कोअी शब्द क्यों नहीं अिस्तेमाल करते?

समाजको सतत देना ही दान

भूमि-बंटन तो भूमि-दानका परिणाम है, पर धर्म तो भूमि-दान है। आज लोगोंने अपने पास तरह-तरहका संग्रह कर रखा है। अुनको धर्म सिखाना है कि अपने पास अधिक संग्रह करना अुचित नहीं है। अुस संग्रहमें से अपने भाअियोंको हिस्सा देना ही धर्म है। मनुष्य समाजके अन्दर रहता है। अिस वास्ते समाजकी सेवा वह सतत लेता रहता है। अुसके बदलेमें यदि वह निरन्तर दान देता रहेगा तो समाज टिकेगा, नहीं तो समाज टिक नहीं सकता। दान करनेमें हम कोअी खास अुपकार करते हैं, सो बात नहीं है; बल्कि हमने काफी भोग समाजसे प्राप्त किया है। समाजके अुपकार हम पर हुअे हैं। अुसके बदलेमें हम कुछ देते हैं, तो अुसका अर्थ दान होता है। वृक्षका फल हम लेते हैं तो वृक्षको पानी पिलाना हमारा धर्म है। अिसमें हम वृक्ष पर बड़ा भारी अुपकार करते हैं सो बात नहीं है। व्यक्ति और समाजके बीच सतत आदान-प्रदान जारी रखना चाहिये। यह बात दानके जरिये होती है। अिसलिअे शास्त्रकारोंने दानका अर्थ ही कहा है 'सम-विभागः'—यानी अच्छी तरहसे विभाजन। शरीरमें अगर किसी जगह रक्तका संचय हो गया तो शरीर अच्छा नहीं रहेगा। परंतु रक्त अगर सारे शरीरमें प्रवाहित हुआ, तो शरीर स्वस्थ रहेगा। अिस तरह संपत्तिका सर्वत्र अभिसरण जारी रहे, अैसी योजनाको ही शास्त्रकार दान कहते हैं, और वह दान हरअेकका धर्म माना जाता है। अपने समाजमें जो अच्छे शब्द मौजूद हैं, अुन शब्दोंकी शक्ति हमें बढ़ानी चाहिये। अुन शब्दोंको बिगड़ने नहीं देना चाहिये। दान शब्दका अर्थ अिन दिनों बिगड़ गया है। अुसका अर्थ गलत हुआ है। अुसका मूल शास्त्रकारोंके अर्थमें हम दृढ़ करना चाहते हैं, अुसके जरिये हमारी शक्ति बढ़ेगी।

निष्काम और सकाम कर्म

दूसरा सवाल यह है कि अिनको अैसा नहीं दीख रहा है कि लोग दान निष्काम बुद्धिसे दे रहे हैं, बल्कि दान देनेमें सामाजिक लाभ होगा, कुछ प्रतिष्ठा बढ़ेगी, अित्यादि भावनाअें दीख पड़ती हैं, तो क्या यह ठीक है? निष्काम बुद्धि दुर्लभ वस्तु है। बड़े-बड़े महात्माओंको भी पूरी तरहसे यह अुपलब्ध नहीं है। निष्काम सेवाका अुत्तम अुदाहरण माताका दिया जाता है। माता पुत्रकी निष्काम सेवा करती है, अैसा अकसर कहा जाता है। परंतु माताके हृदयमें भी आरंभमें प्रेमका मूल स्रोत होता है। परंतु पीछे लड़केसे कुछ प्राप्त हो, अपनेको लाभ हो, अैसी भावना होती है। यह लाभकी भावना अगर माताके हृदयमें जरा भी पैदा न हो, तो माता केवल पुत्रोंकी निष्काम सेवासे ही मोक्ष पानेकी अधिकारिणी हो सकती है।

अिसलिअे हम तो समाजको यह बोध देंगे कि जो भी अुपकारका काम करना होता है, अुसमें अपने लिअे किसी लाभकी वासना न रखना अुत्तम धर्म है। परंतु अगर कोअी अच्छा काम करता है और अुस अच्छे कामसे हमको कीर्ति लाभ हो अैसी वासना रखता है, तो अुसके दान-कार्यको हम अेकदमसे अधर्म कार्य नहीं गिनेंगे। अिस तरह समाजमें कोअी प्रतिष्ठा मिलती है, तो अुसका परिणाम मनुष्यकी भावना पर होता है और बच्चेके माफिक मनुष्यको सत्कर्म करनेका अुत्साह प्राप्त होता है। बच्चेने कोअी अच्छा काम किया तो मांने कहा, बेटा, तूने बहुत अच्छा काम किया। मांकी अुस प्रशंसासे बच्चेका अुत्साह बढ़ता है और काममें अुसको अच्छी स्फूर्ति मिलती है। अैसे ही बच्चेकी मनो-वृत्तिके बहुत सारे लोग होते हैं। अिस वास्ते वे अगर प्रतिष्ठाका ही खयाल रखते हैं, तो हम अुनको निंदनीय नहीं समझें। हां, अितना जरूर कहेंगे कि प्रतिष्ठाका खयाल अगर वे छोड़ दें और निष्काम कर्म करें तो अुनको आत्माके दर्शन भी हो सकते हैं। अिस तरहसे जो निष्काम दान देंगे, निष्काम धर्म करेंगे, अुनको अच्छे फल मिलेंगे। दान और धर्मकार्यके साथ किसी प्रतिष्ठा आदिकी वासना जो रखेंगे, अुनको वे चीजें भी मिल जायंगी, यह परमेश्वरकी योजना है। अिसलिअे भगवान्ने गीतामें भक्तोंको आश्वासन दिया है कि जैसी भावना रखकर भक्ति करोगे, अुसी तरहका फल मिलेगा। अिसलिअे अपने-अपने कामका बड़ा फल प्राप्त करना हरअेककी अक्ल पर निर्भर है। अगर निष्काम बुद्धिसे काम किया जाय तो बड़ा फल मिलेगा, सकाम बुद्धिसे किया जाय तो छोटा फल मिलेगा।

समाज-परिवर्तनकी भूमिका

तीसरा सवाल है, कोरापुट जिलेमें ज्यादा जमीन है, जनसंख्या कम है और कटक जिलेमें जन-संख्या ज्यादा है और जमीन कम है, तो अिन दोनों जिलोंमें लोगोंको समान जमीन कैसे मिलेगी?

यह सवाल गांव-गांवमें पैदा होता है, जिले-जिलेमें पैदा होता है, प्रदेश-प्रदेशमें पैदा होता है और राष्ट्र-राष्ट्रमें भी पैदा होता है। हिन्दुस्तानमें जमीनके हिसाबसे मनुष्य ज्यादा हैं। आस्ट्रेलियामें मनुष्योंके हिसाबसे जमीन बहुत ज्यादा है। मध्यभारतमें जमीन कुछ ज्यादा है, गंगाके किनारे जमीन कम है मनुष्य ज्यादा हैं। जिले-जिलेकी बात तो आपने सवालमें ही पूछी है, कोरापुट और कटकके साथ। अैसे ही गांव-गांवमें भी फर्क होता है। किसी गांवमें बहुत ज्यादा जमीन और लोग कम और किसी गांवमें लोग बहुत और जमीन कम। अिस वास्ते मुख्य काम तो यह करना है कि हम सबको समझा दें और सब समझ जायें कि जमीन पर किसीकी मालकियत नहीं है। जो जमीनकी सेवा करना चाहता है, अुसको जमीन मिलनी चाहिये। अुसी तरह किसी समाजकी, किसी देशकी मालकियत नहीं है। लेकिन सिर्फ समझा देने भरसे हो जायगा, अैसा नहीं है। पर समाज-परिवर्तनके लिअे भूमिका तैयार हो जायगी। मान लीजिये, कोरापुट जिलेके सब लोगोंने जाहिर कर दिया कि हम जमीनकी मालकियत नहीं रखते; जो जमीन लेना चाहें, अुन्हें हम देनेको राजी हैं। अपने पास हम थोड़ी रखेंगे, बाकीकी हम देनेको राजी हैं; जमीनके मालिक हम अपनेको नहीं समझते। कोरापुटवाले अैसा जाहिर कर दें, तो भी अेकदमसे कटक जिलेके लोग वहां जाकर रहेंगे सो बात नहीं है। मालकियत छोड़ दें तो अेक बड़ी बात हो गअी और अुस दिशामें पहला कदम अुठाया गया, अैसा समझना चाहिये।

गांवकी जमीन गांवकी बने

अेक जिलेमें से दूसरे जिलेमें बसनेके लिअे लोग अेकाअेक राजी नहीं होते। अुनके लिअे खास सहूलियतें देनी होंगी। तब वे

www.vinoba.in

अपना जिला छोड़नेके लिअे राजी किये जा सकते हैं। सबको सुविधा हो, मुख्य काम यह करना होगा। जिस क्षेत्रमें लोगोंको जानेके लिअे हम प्रेरणा देना चाहते हैं, वहां सिर्फ जमीनका अिन्तजाम नहीं, बल्कि अुसके साथ-साथ पानीका भी अिन्तजाम हो जाय तो लोग वहां जा सकते हैं। हम जानते हैं कि भूदान-यज्ञकी पूर्तिमें और जहां भूदान हो गया वहां, फौरन पानीका मसला हाथमें लेना पड़ेगा। अिसलिअे कुअें बनानेके लिअे और बांध बांधनेके लिअे लोगोंकी तरफसे श्रम-दान और जिनके पास संपत्ति है अुनसे संपत्ति-दानकी मांग करनी होगी। हमने भी भूदान-यज्ञके साथ-साथ संपत्ति-दान और श्रम-दान आरंभ कर दिया है। जहां गांवमें जमीन मिलती है, वहां हर गांवकी जमीन अुस गांवके वेजमीनोंमें हम बांटते हैं, लेकिन जहां बहुत ज्यादा जमीन, हजारों अेकड़ जमीन अिकट्ठी मिल जाये, वहां आसपासके लोगोंमें बांटना तय करना होगा। दूसरे भी लोग जितने जायें, अुनको भी वहां बसानेके लिअे तैयार करना होगा। यह सब काम आगे करना होगा। फिलहाल तो हम पहली बात यह चाहते हैं कि गांवकी कुल जमीन गांवकी बने और गांवके हरअेक भूमि-हीन और भूमिवालेको पर्याप्त भूमि मिले।

भूदान-यज्ञका रहस्य

चौथा सवाल यह पूछा है कि अुड़ीसा सरकारके पास भी काफी जमीन है, तो क्या भूमि-दानमें अुनसे जमीन लेना जरूरी नहीं है? अिससे तो लोगोंको बहुत लाभ होगा। सरकारके पास जोतनेके लायक अच्छी जमीन हो, तो वह जरूर गरीब लोगोंको मिलनी चाहिये। यह कोशिश हम करेंगे और हमारा विश्वास है कि वह जमीन गरीब लोगोंके वास्ते सरकारसे जरूर मिलेगी। परंतु भूदान-यज्ञके रहस्यको जरा आप समझ लीजिये। भूदान-यज्ञमें लोगोंकी स्वतंत्र-शक्ति खड़ी करनेकी कोशिश की जा रही है। अैसी शक्ति तब तक निर्मित नहीं हो सकती, जब तक लोगोंके हृदयमें परिवर्तन नहीं होगा और आज जो छिपानेकी बात हर कोअी करता है, अुसके बदलेमें देनेकी प्रवृत्ति हरअेकमें पैदा नहीं होगी। अिस वास्ते धर्म जाग्रत होना चाहिये और धर्मकी प्रेरणा हरअेकको मिलनी चाहिये। यह कार्य प्रधान कार्य बनेगा तो सरकारके पास जो चीज है, वह सहज ही गरीबोंके पास आ जायगी।

भूमि-बंटन नहीं, भूमि-दान

भूमिदान-यज्ञमें मुख्य कोशिश यह है कि हरअेक गांवके भूमिवालों और भूमिहीनोंमें अच्छा संबंध हो, प्रेमका संबंध हो। लेकिन अगर भूमिवाले कंजूस बने रहें और फिर सरकारी जमीन बंट जाय तो अुतनेसे भूमिवालोंके लिअे भूमिहीनोंमें प्रेम पैदा नहीं होगा। हम यह भी कहना चाहते हैं कि केवल सरकारी जमीन बंटेगी, तो अितनेसे भूमिहीनोंकी समस्या हल नहीं होगी। अिस वास्ते भूमिवालोंको अपनी तरफसे हिस्सा देना ही होगा, तभी वह समस्या हल होगी। सबसे बड़ी बात यह है कि भूमि-दान-यज्ञमें सिर्फ बांटनेकी बात नहीं है, परंतु अेक धर्मकी भावना निर्माण करनेकी बात है, मालकियत मिटानेकी बात है। अिस वास्ते हमने अिसको भूमि-बंटन नाम नहीं दिया, भूमि-दान नाम दे दिया।

भौतिक और आध्यात्मिक अुन्नति

पांचवा सवाल जो पूछा है वह आखिरी सवाल है और बहुत अच्छा सवाल है। सवाल यह है कि अेक ही साथ आध्यात्मिक और भौतिक अुन्नति हो सकती है क्या? आध्यात्मिक और भौतिक अुन्नतिमें कोअी विरोध नहीं है, बल्कि दोनों मिलकरके अेक ही चीज बनती है। मान लीजिये कि हमने किसी भूखेके वास्ते अिन्तजाम कर दिया कि अुसको खाना मिले। अुसको हमने रोजगार दिलाया, तो भौतिक अुन्नति तो स्पष्ट हुअी और अुसके साथ-साथ आध्यात्मिक अुन्नति भी हुअी, क्योंकि दूसरोंके लिअे मदद देना यह बड़ा धर्म-कार्य है और अुससे चित्तकी शुद्धि होती है। मान लीजिये कि हमने बीमारोंकी सेवा की। बीमार अच्छे हो जायेंगे और देशके काममें लगेंगे, तो भौतिक अुन्नति जरूर होगी। लेकिन अुसके साथ-साथ देश-सेवा करनेसे चित्तकी शुद्धि होती है, अिसलिअे आध्यात्मिक अुन्नति भी होगी। यह बात जैसे व्यक्तिके लिअे लागू होती है, वैसे समाजके लिअे भी लागू होती है। मान लीजिये हिन्दुस्तान सोचता है कि हम दूसरे देशको लूट कर अपने देशको संपन्न बनायें, तब भौतिक अुन्नतिके साथ आध्यात्मिक पतन होगा। जहां आध्यात्मिक पतन होगा, वहां भौतिक अुन्नति भी ज्यादा दिन नहीं टिक सकेगी। फिर देश-देशके बीच लड़ाअियां शुरू हो जायंगी और भौतिक अवनति शुरू होगी। अिस तरहसे भौतिक अुन्नति और आध्यात्मिक अुन्नतिका अेक बहुत ही निकट संबंध है और सच्ची अुन्नति तो आध्यात्मिक होती है, किंतु अुसके साथ भौतिक अुन्नति भी हो जायेगी।

भूदान-यज्ञके जरिये लोगोंमें सद्भावना निर्मित होगी, यही आध्यात्मिक अुन्नति होगी। जब गरीबोंमें जमीन बंटेगी, तो अुसमें गरीब बड़े प्यारसे खूब पैदावार करेंगे, यह भौतिक अुन्नति हुअी। मनुष्य अपने सांसारिक कर्म परमेश्वरको अर्पण करता जाता है, तब आध्यात्मिक अुन्नतिके साथ-साथ आधिभौतिक अुन्नति भी होती है, यही भक्ति-मार्गकी खूबी है। हम जो कुछ करते हैं परमेश्वरके लिअे करते हैं, अैसी भावनासे करें तो अुसमें भौतिक और आध्यात्मिक अुन्नतिका संगम हो जाता है।

(भूदान-यज्ञसे) **विनोबा**

ठाटबाटका मोह

बम्बअीसे अेक भाअी कुछ समय पहले अपने गांव गये होंगे। वहां अुन्हें जो कुछ देखने-जाननेको मिला, अुस परसे अपने मनमें अुठे विचार अुन्होंने लिख भेजे हैं और कहा है कि वे विचार मुझे ठीक मालूम हों तो 'हरिजन' में मैं अुनकी चर्चा करूं। अुनमें से अेक विचारका शीर्षक है 'ठाटबाटका मोह'। अुसमें वे कहते हैं:

"अखबारोंमें मैंने पढ़ा है कि चर्चगेट स्टेशन पर दो नये प्लेटफार्म बनानेके लिअे ५० लाख रुपये खर्च किये जायंगे। कुछ समय पहले मैंने पढ़ा कि अहमदाबाद म्युनिसिपल कार्पोरेशनको वहांका रेलवे स्टेशन बहुत रद्दी मालूम होनेसे अुसने नया, बड़ा और अच्छा स्टेशन बांधनेकी मांग की है। सूरत और बड़ोदामें बड़े बड़े स्टेशन बांधे जायं, तो अहमदाबाद और दूसरे शहरोंमें क्यों नहीं?

"कल्याण-राज्यकी रचनाके लिअे योजना बनाना जरूरी है, देशकी भावी अुन्नतिके लिअे वर्तमान पीढ़ीको थोड़ा बोझ अुठाना चाहिये, यह भी सच है। परन्तु यह बोझ अुठानेकी शक्तिकी भी अेक मर्यादा तो है ही। अुसमें भी केवल 'ठाटबाटके लिअे' बहुतसा गलत बोझ डाला जाय, तब तो सहनशील जनता भी घबरा अुठती है।

"नअी रेलवे लाअिनें डाली जायें, नये डिब्बों और अिंजिनोंके लिअे पैसे खर्च किये जायं, जिन स्टेशनों पर छप्पर न हों वहां छप्पर डाले जायं, पानीकी व्यवस्था की जाय, मुसाफिरोंके लिअे बैठने या आराम करनेके स्थान बनाये जायं या अुनमें सुधार किया जाय, यह सब तो समझमें आ सकता है। परन्तु हर स्टेशन पर अैसी जरूरतें पूरी करनेके पहले 'आलीशान स्टेशन' बनानेके लिअे 'लाखों रुपये' खर्च करना अेक प्रकारका पागलपन ही बताता है।"

पहले जमानेकी जरूरतें देख-समझकर बनाये गये स्टेशन आजके जमानेमें कुछ असुविधावाले मालूम हो सकते हैं। हमारे देशकी आबादी ही बहुत नहीं बढ़ी है, बल्कि लोगों और मालकी आव-जाव

www.vinoba.in

भी खूब बढ़ गअी है। अिसे ध्यानमें रखकर कुछ परिवर्तन करने जरूरी हो सकते हैं। फिर भी पत्रलेखक जो कुछ कहते हैं अुसमें काफी तथ्यांश है, अिससे अिनकार नहीं किया जा सकता। ठाटबाटका मोह मनुष्यको होता है, और कितनी ही बार वह अुसमें फंस जाता है। भारतके दूसरे क्षेत्रों पर नजर डालें, तो वहां भी यह मोह देखनेमें आता है। अुदाहरणके लिअे, करोड़ों रुपये खर्च करके बनाये जानेवाले विशाल बांधोंकी नीति। पाठक यह न मानें कि अैसे बांध बांधना गलत है। सवाल तो दूसरा ही है: क्या अैसे विशाल बांध हमारे देशके लिअे बिलकुल जरूरी हैं? जिस ढंगसे वे बनाये जाते हैं वह ठीक है? क्या अुससे पहले करने लायक छोटे-छोटे काम हमारे सामने नहीं पड़े हैं, जिनमें राष्ट्रका धन खर्च होना चाहिये? देशमें अैसे कितने ही प्रदेश हैं, जहां पीनेका साफ पानी नहीं मिलता। क्या अुनकी ओर पहले ध्यान नहीं दिया जाना चाहिये? अैसे अैसे अनेक प्रश्नोंकी दृष्टिसे विशाल बांधों और बिजलीकी नीति विवादास्पद हो जाती है।

बड़े बड़े बांधोंसे खेतीके लिअे पानीकी सुविधा होगी। लेकिन क्या वह बड़े बड़े बांधोंसे ही हो सकेगी? गांव-गांवमें कुअें, तालाब और नदी-नाले हैं। बरसोंकी अुपेक्षाके कारण वे मिट्टी, कचरे वगैरासे भर गये हैं और निकम्मे बन गये हैं। मरम्मत करके अुन्हें ठीक करनेका व्यापक कार्य क्या पहले करने जैसा नहीं है? अुसका असर भी कितना व्यापक होगा? लोगोंको अुस काममें बड़ा अुत्साह आयेगा, और वे मेहनत भी खुशी खुशी करेंगे। अिसके बजाय अमेरिका जैसे देशोंका अनुकरण करके अूपरसे और यंत्रों द्वारा काम लेकर विशाल बांध बनानेमें 'ठाटबाटके मोह' का भी हाथ है। काम करनेवालोंको अैसा लगता है कि सारी दुनिया आश्चर्यचकित हो जाय अैसा काम करें तो दूसरे देशों पर हमारे देशका रोब जमेगा, अुसकी शान बढ़ेगी।

अैसे बांध बांधनेके ढंगके विषयमें भी अेक पत्रकार लिखते हैं, जो ध्यान देने लायक है। सौराष्ट्रकी ब्राह्मणी नदीके बांधका अुल्लेख करके वे कहते हैं कि मैसूरके प्रख्यात अिंजीनियर श्री विश्वेश्वरैयाकी सलाहके मुताबिक वह बना है। अुसके विषयमें ध्यान देने लायक बात तो यह है कि वह ८,७०० फुट लम्बा, ३८० फुट चौड़ा और ६१ फुट अूंचा है। अुसका पाल केवल मिट्टीका बना है। अुसके बनानेमें ८० लाखका खर्च आया है।

पालके किनारे पर जहां पानी निकलता है, केवल अुसी जगह आवश्यक चुनाअी की गअी है। चुनाअीमें भी मिट्टी, पत्थरों और कंकरोंका अुपयोग किया गया है। सीमेन्टका अुपयोग नहीं किया गया। अिस बांधके बारेमें यह डर बताया गया था कि भारी बाढ़में वह धुल जायगा। परन्तु पिछले सालकी भारी वर्षामें भी अैसा नहीं हुआ और अुस बांधने ठीक काम दिया है।

अिस प्रकार हकीकतें बताकर वे भाअी कहते हैं कि हमारे पास विराट् मानव-बल है। दूसरी तरफ सीमेन्ट वगैरा साधनोंकी तंगी है। अैसी हालतमें ब्राह्मणी नदीके बांधके नमूने पर काम करें तो ठीक नहीं होगा? अगर छोटे-छोटे नदी-नालों पर बांध बनाये जायं और कुअें-तालाब खोदकर या अुपेक्षित स्थितिमें पड़े हुओंको ठीक कराकर अुनसे काम लें, तो श्रमकी पूंजीसे बहुत काम होगा और लोग तुरन्त अुसका फायदा अुठा सकेंगे। बड़े बांधोंकी तरह प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी। अुनके लिअे भारी खर्च निकालनेकी आर्थिक कठिनाअी पैदा नहीं होगी। और बांधके चालू होने पर अुसका बोझ भी लोगोंको भारी नहीं मालूम होगा। अिस क्षेत्रमें भी केन्द्रित बनाम विकेन्द्रित पद्धतिका तत्त्वज्ञान लागू होता है। परन्तु बड़ी कठिनाअियां दो हैं: पश्चिमका यंत्रोद्योगवाद और ठाटबाटका मोह। भारतकी ग्राम-संस्कृति नया मार्ग चाहती है; यंत्रोद्योगवादकी शहरी सभ्यताका तौर-तरीका अुसके अनुकूल नहीं हो सकता, यह हमें समझ लेना चाहिये। साथ ही, ठाटबाटके मोह पर भी हमें विजय पाना चाहिये; विकेन्द्रितताकी सादगीमें यह चीज हमें नहीं दिखाअी देती। अुसमें भव्यता तो है, लेकिन वह केन्द्रित ठाटबाट और आडम्बरके रूपमें नहीं दिखाअी देती। और स्थूल आंखें सनातन कालसे ठाटबाटसे चौंधियाती रही हैं। अिस मोहको अगर हम जीत लें, तो भारतके हमारे बहुतसे काम बहुत थोड़े खर्चमें जल्दी हो जायं।

१३–४–'५५ **मगनभाअी देसाअी**

(गुजरातीसे)

कौमवाद और जातिवाद

[ता० ९–४–'५५ के अंकमें छपे 'कौम और जाति' लेखके अनुसंधानमें।]

कौम (सम्प्रदाय) और जाति हमारे समाजकी पुरानी संस्थाअें हैं। अिसी तरह अुनके संबंधमें पैदा होनेवाले कौमवाद और जाति-वादके भाव भी भारतीय समाजमें अेक या दूसरे रूपमें प्राचीन कालसे चले आ रहे हैं।

कौम और जाति अिन दो संस्थाओंमें अेक महत्त्वका फर्क है; अुसे शुरूमें ही देख लें। कौम समाजका भेददर्शक भाग है; अुससे पार्थक्यकी वृत्ति प्रगट होती है। जाति भेददर्शक नहीं, अंगदर्शक भाग है। पार्थक्य जाति भी बताती है, लेकिन वह समाजका समन्वय और सहकार-मूलक वर्गीकरण है। कौम-कौमके बीच जब पार्थक्यकी भावना बहुत ज्यादा भड़क अुठती है या जब विविध जातियोंका पारस्परिक सहकार अुच्च-नीचता आदि भावोंसे दूषित हो जाता है, तब अुनमें वाद बननेकी बुराअीका प्रवेश होता है। हमारे देशके अितिहासमें अिन दोनों बुराअियोंका कुप्रभाव देखनेमें आता है।

१

भारतके अितिहासके प्राचीन कालमें कौमवाद मालूम नहीं होता। अनेक जातियां अपना धर्म पालती थीं; वे अमुक समन्वय-दृष्टि रखकर अेक-समाज बनती थीं। समाजकी प्रमुख जातियां अपने अन्दर दूसरी जातियोंको समाकर अेक विशाल कौम बनती थीं। अुतनी अुदारता अुस समय थी; अुसके अनुसार व्यापक धर्म-दृष्टि और तदनुसार आचार-विचार-धर्म भी लोगोंमें विकसित हो रहा था। अिस्लामके अुदयके पहले यह प्रक्रिया हमारे देशमें काफी स्थिर हो चुकी थी।

अिस तरह अेक राष्ट्र अथवा अेक कौम बननेकी प्रक्रियामें से ही जाति-संस्था भी सूझी होगी, अैसा मालूम होता है। कारण, जो जातियां अेक विशाल समन्वय-धर्म स्वीकार करके अेक-समाज बनती गयीं, अुनकी अपनी अपनी कुछ विशेषतायें तो आरंभमें थीं, जो हरअेकको दूसरोंसे अलग करती थीं। अिसके सिवा हरअेकका अपना काम-धंधा भी रहा होगा। अेक महाजाति या कौममें रूपान्तरित होते हुअे भी अुन्होंने अपनी अिन विशेषताओंको कायम रखा। अुनका जो आचार-धर्म था, वह भी अुनके साथ रहा — बस अितना ही हुआ कि वह समाजकी अेकरूपतामें यथास्थान ग्रथित हो गया। कह सकते हैं कि वे कौमोंके बजाय जातियां बन गयीं। अुनकी अलगता मिट गयी, और कौम या समाजके साथ अुनका संबंध अंगांगि-भावका हो गया। लेकिन अिसके बावजूद जो पार्थक्य अभी भी रह गया, वह अुच्च-नीचताके भावके रूपमें और अलग अलग रोटी-बेटी-व्यवहारकी मर्यादाओंमें प्रगट हुआ। अिस तरह जाति-संस्थामें जातिवादका दोष अुत्पन्न हुआ होगा। यह दोष कितना

www.vinoba.in

विकराल था, यह बात तब स्पष्ट प्रगट हुअी, जब कि भारत पर अेक नयी और प्रबल कौमका आक्रमण हुआ।

२

भारतमें मुसलमान अेक नअी कौमकी तरह आये। जातिवाद (और कुलाभिमान जो कि जातिवादकी ही अेक शाखा है) से निर्बल बने हुअे समाज पर वे चोट कर सके। नअी आनेवाली अिन जातियोंके धर्म-संस्कार और जीवन-संस्कार भिन्न थे। यहां जाति-समन्वयका चला आ रहा पुराना प्रयोग अब जीवंत बलके रूपमें नहीं रह गया था। वह निर्जीव होकर जड़ बन गया था। अिसलिअे ये नअी आनेवाली जातियां अिस या अुस नामकी जातियां बनकर हिन्दू समाजका अंग नहीं बनीं। वे हिन्दू समाजसे अलग ही रहीं। परिणाम यह हुआ कि नयी आनेवाली मुसलमान जातियां अलग कौम बन गयीं; केवल अितना ही नहीं, अुसमें से कौमवाद प्रगट हुआ। अिस्लाम केवल धर्मकी सीमामें नहीं रहा, वह अितने जोरसे बढ़ा कि अुसने धर्मवार कौमके विचारको प्रेरित किया। कारण, वह राजकर्ताओंका धर्म बन गया था।

अिसके सिवा, अिस्लामी समाजमें जातिभेद जैसी कोअी संस्था नहीं थी। ख्रिस्ती धर्मकी तरह यह धर्म भी अन्यधर्मियोंके धर्मान्तरमें मानता था। जातिभेदके कारण नीची या तुच्छ मानी जानेवाली हिन्दू जातियां अिस सामाजिक कारणके फलस्वरूप मुसलमान बनती गयीं। अिसके आर्थिक कारण भी रहे होंगे। अिस्लामके नये धर्मका तेज भी अेक कारण था। सारांश यह कि हिंदू कौमके साथ मुसलमान कौम भारतमें पैदा हुअी और कौमवादकी भावना जाग्रत हुअी।

भारतके अितिहासके राजपूत-युगकी शताब्दियोंमें हिन्दुओंने अिस नये आक्रमणका मुकाबला किया। लेकिन जाति तथा कुलाभिमानके भावोंसे छिन्न-भिन्न हुआ हिन्दू समाज अन्तमें अिस संघर्षमें निर्बल सिद्ध हुआ और नयी कौम देशमें स्थायी हो गयी। अिसमें से अिन दोनों कौमोंके बीच अेकता और मेलका समन्वय-युग शुरू हुआ। अकबर जैसा बादशाह और नानक, दादू आदि संत अिस अुज्ज्वल युगके महारत्न थे। अिसी तरह अिस युगमें जातिवादकी बुराअीके खिलाफ भी रामानंद और अुनके अनेक शिष्योंने भारी युद्ध किया। सारांश यह कि अिस समय दो-चार सौ वर्ष तक भारतने जातिवाद और कौमवादके दूषणोंके खिलाफ लगातार संघर्ष किया। १७ वीं सदी आयी, तब तक भारतका अितिहास यहां तक पहुंचा था। अिस सदीसे फिर अेक नया प्रवाह शुरू हुआ, जिसका असर कौमवाद और जातिवादके निवारणकी चल रही प्रक्रिया पर अलग प्रकारका हुआ।

३

मुगल कालमें जो समन्वय-युग शुरू हुआ था, अुस पर औरंगजेबने अपनी धर्मान्धतासे तीव्र प्रहार किया। फलस्वरूप हिंदू कौमने मराठाओं और सिक्खोंके मारफत अुसका जवाब दिया। परन्तु यह जवाब संतयुगके जवाबसे नये प्रकारका था। अुसमें समन्वयका मानवधर्म नहीं, कौमकी भिन्नताका अभिमान मुख्य चीज थी। अिस बातने भारतके समाज-शरीरमें कौमवादको पक्के जहरके रूपमें पूरा-पूरा भर दिया। यदि मराठा ताकत अिस युद्धमें पूरी तरह विजयी हुअी होती, तो भारतका अितिहास नये रास्ते गया होता। लेकिन वैसा नहीं हुआ। मराठा ताकतका रूप कौमवादी था, अितना ही नहीं; अुसमें अेक नया दूषण भी अुत्पन्न हो गया था — प्रांत या प्रदेशवादका। भारत जैसे बृहत् भूखंडमें मराठा ताकत अेक राष्ट्रीय सत्ताके रूपमें काम नहीं कर सकी। सिक्खोंकी शक्ति तो अपनी प्रान्तीय हदके बाहर बढ़ ही नहीं सकी। मुगल सल्तनतके टूटने पर न तो अेक मराठा राज्य पैदा हुआ और न अेक राष्ट्रभाव रह गया। दूसरी ओरसे अंग्रेजोंका प्रवेश शुरू हुआ। और अिस तरह फिर अेक नया युग शुरू हुआ।

अिस्लामके बाद आये हुअे अिस नये युगने भारतका संबंध अर्वाचीन पश्चिमी देशोंके साथ जोड़ा। अुनके लक्षण अलग प्रकारके थे। भारतमें पहली बार युरोपकी अीसाअी व्यापारी कौमें दाखिल होने लगीं, और अिसके लिअे अुन्होंने समुद्री मार्ग लिया था। अिस समय शायद हिन्दू कौमने समुद्री यात्रा आदि बातें स्वरक्षाकी दृष्टिसे वर्ज्य कर रखी थीं और अपनी कौमी रक्षाके लिअे अनेक प्रकारके बंधनोंकी बाड़ बना डाली थी। अुनकी तुलनामें अंग्रेज लोग समुद्री प्रजाकी तरह आये और अपने साथ अनेक नये-नये कौशल लाये। अुदाहरणके लिअे, अनुशासनबद्ध सेना, तोपखाना, संगठित कार्यपद्धति आदि। भारतका समाज और अुसकी राजनीतिक परिस्थितियां अुस समय अैसी थीं कि अुसमें अंग्रेजोंकी जीत हुअी, अुन्होंने धीरे-धीरे देशके राज्यतंत्र पर अधिकार कर लिया और १९ वीं सदीमें अुसे अपनी रानीके साम्राज्यमें मिला लिया। अिस तरह भारतमें पहली बार परदेशी राज्यकी स्थापना हुअी।

अंग्रेज लोग अीसाअी कौम थे लेकिन अुन्होंने अुस तरह व्यवहार न करके परदेशी राज्यकर्ता कौमकी तरह व्यवहार किया, यह बात अुल्लेखनीय है। अुसमें अेक नये ही ढंगका कौमवाद — गोरे लोगोंकी अुच्चताके दावेका अलग भाव भारतीय समाजके देखनेमें आया, जो अुस पर असर करने लगा। यह कौमवाद धर्मके बजाय चमड़ीके रंग पर आधारित था और राष्ट्रवादी था। अंग्रेज कौम अेक राष्ट्रीय कौम थी। अुसने भारतमें धर्मवार कौमके विचारके सिवाय देशवार राष्ट्रभावनाके जागरणको भी प्रेरणा दी। अिस तरह कौमका विचार केवल धर्मसंस्कृतिमें नहीं बंधा रह गया; अुसे राजकीय रूप मिलने लगा। और अिस तरह जाति और कौमके साथ राष्ट्र-संबंधी विचारको भी प्रेरणा मिली। अंग्रेज-कालीन अितिहासमें यह अेक नयी बात हुअी। अुसका विचार अलग लेखमें करूंगा।

२७–४–'५५ मगनभाई देसाई

(गुजरातीसे)

हमारे गांवोंका पुनर्निर्माण

गांधीजी

संपादक: भारतन् कुमारप्पा

कीमत १–८–० डाकखर्च ०–५–०

भावी भारतकी अेक तसवीर

[दूसरी आवृत्ति]

किशोरलाल मशरूवाला

कीमत १–०–० डाकखर्च ०–५–०

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद–१४

विषय–सूची

		पृष्ठ
गांधीजीके अनुसार औद्योगिक नीति		८९
औद्योगीकरणका मूल्य	मगनभाई देसाई	९०
भूदान और ग्रामोद्योग	मगनभाई देसाई	९२
भूदानके बारेमें कुछ सवाल	विनोबा	९३
ठाटबाटका मोह	मगनभाई देसाई	९४
कौमवाद और जातिवाद	मगनभाई देसाई	९५
टिप्पणी :		
वनस्पति घीको जमाया न जाय		९१

www.vinoba.in